कविता / ओमप्रकाश वाल्मीकि

सदियों का संताप

चूल्हा मिट्टी का
मिट्टी तालाब की
तालाब ठाकुर का ।

भूख रोटी की
रोटी बाजरे की
बाजरा खेत का
खेत ठाकुर का ।

बैल ठाकुर का
हल ठाकुर का
हल की मूठ पर हथेली अपनी
फ़सल ठाकुर की ।

कुआँ ठाकुर का
पानी ठाकुर का
खेत-खलिहान ठाकुर के
गली-मुहल्ले ठाकुर के
फिर अपना क्या ?
गाँव ?
शहर ?
देश ?

(नवम्बर, 1981)

बैक्टीरिया और वायरस का मनुष्य से बहुत पुराना रिश्ता: डॉक्टर मिथिलेश

कुछ बैक्टीरिया हमारे दोस्त होते हैं जैसे हमारी आंतों में रहने वाले मित्र बैक्टीरिया जो खाना पचाने में मदद करते हैं। या फिर दूध को दही में बदलने वाले बैक्टीरिया। और कुछ कट्टर शत्रु जो हमारे शरीर में घुसते हैं, यहां कॉलोनियां बनाते हैं, हमारे शरीर पर जिंदा रहते हैं, हमें बीमार करते हैं और फिर मृत्यु का कारण भी बनते हैं। इन शत्रु बैक्टीरिया से हमारी दुश्मनी तब से ही है जब से हमारा अस्तित्व है। और तब से लेकर पूरे मानव इतिहास के दौरान मनुष्य इनके आगे बेबस ही रहा है। इनकी वजह से होने वाली प्लेग जैसी बीमारियों ने तो सभ्यता की सभ्यताएं तक नष्ट कर दी थी। यह सब पिछली सदी तक जारी था।

लेकिन देर से ही सही, मनुष्य के सबसे विश्वसनीय सेवक विज्ञान ने फिर एक बार अपनी उपयोगिता सिद्ध कर दी। बीमारियों को भगवान का प्रकोप मानने वाले लोगों की मदद अंततः विज्ञान ही करता है। अभी भी कुछ ऐसा ही हुआ। इस बार विज्ञान ने मनुष्य को दी एंटीबायोटिक दवाएं जिनकी मदद से हमने किसी समय असाध्य समझी जाने वाली बैक्टीरिया जनित बीमारियों को साध लिया। इसकी शुरुआत कैसे हुई?

लंदन में सेंट मैरी हॉस्पिटल में एक डॉक्टर थे। डॉ. एलेग्जेंडर फ्लेमिंग। डॉ. फ्लेमिंग एक बैक्टीरियोलॉजिस्ट थे। यानी वे बैक्टीरिया के स्पेशलिस्ट थे। यह बात है सितम्बर 1928 की। डॉ. फ्लेमिंग गर्मी की छुट्टियां बिता कर वापस काम पर लौटे थे। लैब का सामान इधर उधर बिखरा हुआ था। स्टेफाईलोकॉकस नामक बैक्टीरिया की जो पैट्री डिश (लैब में जिन कटोरियों में बैक्टीरिया की कॉलोनियां बनाई जाती हैं) वे रख कर गए थे उनकी जांच करने पर उन्होंने पाया कि कुछ पैट्री डिश के ऊपर पेनिसिलियम नोटाटम नाम की एक फफूंद लगी हुई थी। डॉ फ्लेमिंग ने बैक्टीरिया की इन कॉलोनियों का सूक्ष्मदर्शी से मुआयना किया तो वे हैरान रह गए। उन्होंने देखा कि जिन कॉलोनियों पर फफूंद लगी थी उनमें बैक्टीरिया की ग्रोथ ही नहीं हो रही थी। डॉ फ्लेमिंग ने अब जानबूझ कर यह फफूंद दूसरी पैट्री डिशों पर लगा दी और कुछ हफ्ते इसको विकसित होने दिया। इसके बाद उन्होंने फिर से सूक्ष्मदर्शी में देखा। फिर से वही परिणाम आये। जिन कॉलोनियों पर फफूंद थी उनका विकास नहीं हुआ और जिनपर फफूंद नहीं थी वे वैसे ही सामान्य रूप से विकास करती रही। अपने इस प्रयोग से डॉ फ्लेमिंग इस नतीजे पर पहुंचे कि पेनिसिलियम नोटाटम नामक इस फफूंद में कुछ तो ऐसा है जो बैक्टीरिया का विकास नहीं होने दे रहा और इससे भी ज्यादा जरूरी ये कि इसकी मदद से बैक्टीरिया के इन्फेक्शन से लड़ा जा सकता है।

डॉ अलेक्जेंडर फ्लेमिंग की यह खोज युगांतरकारी थी। डॉ फ्लेमिंग ने लिखा कि 28 सितम्बर 1928 की सुबह जब मैं उठा तो एंटीबायोटिक की खोज करके चिकित्सा विज्ञान में क्रांति कर देने की मेरी कोई योजना नहीं थी लेकिन मैंने असल में बिल्कुल यही किया था।

लेकिन इस खोज के बाद भी इससे एंटीबायोटिक दवा बनने में अभी समय लगना था। असल में डॉ एलेग्जेंडर फ्लेमिंग के पास न तो उतनी सुविधाएं थी और न ही उनकी रसायन विज्ञान की पृष्ठभूमि थी। तो वे इसके बाद इस रिसर्च को आगे नहीं बढ़ा पाए। लेकिन ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी में पैथोलॉजी के एक प्रोफेसर थे, डॉ हॉवर्ड फ्लोरे। उन्होंने 1938 में डॉ फ्लेमिंग का पेपर पढ़ा। तो उन्होंने निश्चय किया कि डॉ फ्लेमिंग के "एंटीबैक्टीरियल एक्शन" नामक इस सिद्धांत के नीचे छिपे हुए विज्ञान को सामने लाया जाए। डॉ फ्लोरे के एक मेधावी सहयोगी थे डॉ एर्नस्ट चैन। इन दोनों ने मिलकर पेनिसिलियम फफूंद की बहुत सारी कॉलोनियां विकसित कर ली। 1940 में इन्होंने स्ट्रेप्टोकॉकस नामक एक घातक बैक्टीरिया से संक्रमित 50 चूहों पर इसका प्रयोग किया। आधों को पेनिसिलिन दी गई और आधों को नहीं। जिनको नहीं दी गई थी वे सब मर गए। अब डॉ फ्लोरे को लगा कि इसका प्रयोग इंसानों पर किया जाना चाहिए। लेकिन एक समस्या अभी भी थी। फफूंद से इतनी मात्रा में शुद्ध पेनिसिलिन कैसे निकाली जाए जिससे कि इंसानों का इलाज हो सके? एक आदमी के इलाज के लिए जरूरी पेनिसिलिन तैयार करने के लिए 2000 लीटर पेनिसिलियम मोल्ड कल्चर की जरूरत पड़ती थी।

सितम्बर 1940 में उन्हें एक मरीज अल्बर्ट अलेक्जेंडर मिला। उसके चेहरे की चोटों में गंभीर इन्फेक्शन हो गया था जो पूरे चेहरे, सर और आँखों में फैल गया था। कोई दवा काम नहीं कर रही थी। फ्लोरे और चैन ने उसके डॉक्टर से उनकी दवा इस्तेमाल करने को कहा। पांच दिन दवा देने के बाद अल्बर्ट की हालत सुधरने लगी। लेकिन उनके पास और शोधित दवाई नहीं थी। तो इलाज पूरा नहीं हुआ। अंततः इन्फेक्शन की वजह से मरीज की मौत हो गई।

डॉ फ्लोरे की लैब में एक बायोकेमिस्ट थे डॉ नार्मन हीटले। उन्होंने इसे शोधित करने का तरीका खोज निकाला था। 1941 में डॉ फ्लोरे और डॉ हीटले अमेरिका पहुंचे। ताकि वहां के वैज्ञानिकों के साथ इस "चमत्कारी दवा" के बड़े पैमाने पर निर्माण का तरीका ढूंढा जा सके। उनको पता था कि पेनिसिलियम नोटाटम नामक यह फफूंद इतनी पेनिसिलिन नहीं दे सकती। इसलिए वे पेनिसिलियम की दूसरी प्रजातियों की खोज करने लगे। अंततः उन्होंने पाया कि एक फफूंद प्रजाति पेनिसिलियम क्राइसोजियम पेनिसिलियम नोटाटम से 200 गुणा ज्यादा पेनिसिलिन बनाती है जिसको ट्रीट करके वे 1000 गुना ज्यादा बनाने में सफल रहे।

इसके बाद तो जैसे चिकित्सा की दुनिया में क्रांति आ गई। "चमत्कारी दवा" ने सच में चमत्कार कर दिया। विश्वयुद्ध में इसने लाखों लोगों की जान बचाई। युद्ध में इन्फेक्शन की वजह से मरने वाले लोग लड़ाई की चोटों से मरने वालों से कहीं ज्यादा होते हैं। प्रथम विश्वयुद्ध में बैक्टीरियल निमोनिया की वजह से मृत्यु दर 18 प्रतिशत थी और दूसरे विश्वयुद्ध में यह घट कर 1 प्रतिशत पर आ गई थी। इसी चमत्कारी दवा की वजह से। युद्ध के बाद 1945 में डॉ एलेग्जेंडर फ्लेमिंग, डॉ हॉवर्ड फ्लोरे और डॉ एर्नस्ट चैन को संयुक्त रूप से मेडिसिन का नोबेल पुरस्कार दिया गया।

पुरुस्कार प्राप्त करते समय अपने भाषण में डॉ फ्लेमिंग ने चेतावनी दी थी कि इस दवा का बेवजह इस्तेमाल न किया जाए। नहीं तो बैक्टीरियल रेजिस्टेंस यानि दवा के खिलाफ बैक्टीरिया की प्रतिरोधक क्षमता विकसित हो जाएगी और दवा काम नहीं करेगी। दुर्भाग्य से उनकी चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया गया और आज बैक्टीरियल रेजिस्टेंस एक गंभीर समस्या बन कर खड़ी है।

पेनिसिलिन पहली एंटीबायोटिक दवा थी। इसके बाद तो इस क्षेत्र में जैसे क्रांति आ गई। आज हमारे पास एंटीबायोटिक दवाओं का जखीरा मौजूद है जिनकी मदद से हम बीमारियों के खिलाफ लगातार लड़ रहे हैं और जीत भी रहे हैं।

पेनिसिलिन और उसके निर्माताओं की कहानी बच्चों को जरूर बताएं। उन्हें बताएं कि हमारे असली सुपर हीरो कौन लोग रहे हैं। उन्हें बताएं कि ज्ञान विज्ञान एक व्यक्ति या वर्ग की नहीं बल्कि पूरी मानवता की साझी सम्पत्ति हैं। उन्हें अच्छा इंसान बनने के लिए प्रेरित करें। सिर्फ डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक या कोई भी पेशेवर बनना काफी नहीं है। जनता का डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक बनना जरूरी है।

श्रम

गुंडई में ऑटो-पिन मालिकान अव्वल दर्जे पर रहे हैं

सतीश कुमार

एनआईटी औद्योगिक क्षेत्र में स्थित ऑटो-पिन मालिकान अपने यहां कार्यरत मज़दूरों का शोषण व प्रताड़ना करने में किसी गुंडे से कम नहीं रहे। हिन्द मज़दूर सभा का झंडा लगने से पूर्व यहां के मज़दूरों ने सीटू का झंडा लगाने का भी प्रयास किया था। योजना यह थी कि सीटू से जुड़े मज़दूर एक शाम को प्याली चौक मैदान में एकत्र होंगे और वहां से जुलूस लेकर ऑटो-पिन गेट पर उस वक्त पहुंचेंगे जब वहां के मज़दूरों की शिफ़्ट समाप्त होगी। सीटू से जुड़े सैंकड़ों मज़दूर वहां एकत्र हुए कि अचानक तीन ट्रकों में भर कर लाठी डंडों व तलवारों से लैस होकर सैंकड़ों गुंडे वहां पहुंचे। उनका नेतृत्व बीएमएस से ऑटो पिन यूनियन के प्रधान जगन्नाथ गेरा कर रहे थे। इन हथियार बंद गुंडों ने ट्रकों से उतरते व ललकारा मारते हुए पूरे ज़ोर से ऐसा हल्ला बोला कि मैदान में शान्ति से खड़े सीटू मज़दूरों में भगदड़ मच गयी। भागते हुए मज़दूरों को जगन्नाथ के गुंडों ने बहुत बेरहमी से पीट-पीट कर बुरी तरह से घायल कर दिया। अनेकों के सिर फ़टे व हाथ पैर टूटे।

उस वक्त मैं भी सीटू मज़दूरों के साथ खड़ा था और उस हल्ले से इस कदर डर गया था कि भाग ही नहीं सका और जहां का तहां खड़ा रह गया। मेरे साथ खड़े लोग भाग रहे थे और हमलावर उनका पीछा कर रहे थे और उस भगदड़ में मैं किंकर्त्तव्य विमूढ़ बना खड़ा था। हमलावरों ने जरूर यही समझा होगा कि जो चुपचाप खड़ा है वह ऐसे ही कोई तमाशबीन होगा या फ़िर उनके निशाने पर केवल जान बचा कर भागते लोग थे। चाहे कुछ भी रहा हो मैं साफ बच गया। 'युद्ध' समाप्त होने के बाद मैं अन्य साथियों के साथ मिल कर घायलों को सम्भालने व बीके अस्पताल पहुंचाने में जुटा।

अस्पताल में थाना एनआईटी के तत्कालीन एसएचओ सीस राम पूरे दल-बल के साथ लीपा-पोती करने पहुंचे। उस वक्त रेलवे लाइन के पश्चिम की ओर केवल एक ही थाना एनआईटी होता था। घायलों की दुर्दशा, फटी हुई खोपड़ियां टूटे हुए हाथ-पैर देख कर एसएचओ ने आईपीसी की सबसे कमज़ोर धाराओं (323,506) का केस दर्ज किया। टूटे हाथ-पैरों के लिये एसएचओ का कहना था कि एक्सरे के बाद यदि जरूरी होगा तो अन्य धारा लगाई जायेगी। फ़टी हुई खोपड़ियों के बारे इसका कहना था कि यह तलवार का नहीं लाठी का घाव है यानी कुंद हथियार की घाव है। जाहिर था कि मामले में न कुछ होना था और न ही हुआ।

उधर ऑटो पिन मालिकान मज़दूरों के शोषण में बेरोक-टोक जुटा रहा। उसने कुछ औद्योगिक प्लॉट सेक्टर 6 में खरीद कर वहां भी काम शुरू कर दिया था। कुछ समय बाद उन्हीं नये प्लॉटों में से एक के प्रताड़ित मज़दूर सीटू कार्यलय पहुंचे। यद्यपि कुछ समय पूर्व हम ऑटो पिन पर भयंकर गच्चा खा चुके थे लेकिन हिम्मत नहीं हारी और सिरॉको नाम से बनाये गये प्लांट के गेट पर मज़दूरों के साथ जा डटे। इस बार यहां धरने पर बैठे मज़दूरों के कम्पनी मालिक सरदार अवतार सिंह ने अपनी सरदारी का जलवा दिखा दिया। उसने पंजाब से निहंग सिख बुलाकर अपनी फैक्ट्री में बैठा दिये। एक रात निहंगों ने मज़दूरों पर हमला कर दिया, उन्हें बुरी तरह से मारा-पीटा उनके बैनर व तम्बू आदि सब जला दिये। अगले दिन पुलिस आई, भीतर बड़े मजे से आराम फ़रमा रहे निहंगों को देखा भी लेकिन गिरफ़्तारी कोई नहीं की गयी; केवल कुछ काग़जी खानापूर्ति करके काम को टरका दिया गया। जाहिर है उसके बाद वहां यूनियन तो न बन सकी परन्तु कम्पनी भी ठीक ढंग से पनप नहीं पाई।

मालिकान अपनी नाजायज तालाबंदी को जायज बनाने के लिये तमाम हथकंडे अपनाते हैं

वेतन के लिये घेराव की नीति से उत्साहित मज़दूरों ने संगठित होकर अपनी अन्य जायज मांगों को उठाना शुरू किया तो एक दिन, शायद वेतन देने वाले दिन कम्पनी गेट पर ताला लगा कर एक नोटिस चस्पा कर दिया कि जो मज़दूर कम्पनी की शर्तों वाला फ़ार्म भर कर काम पर आना चाहते हैं, वे आ जायें। लेकिन कम्पनी की ओर से फ़ार्म उपलब्ध नहीं कराये गये थे। ऐसे में एचएमएस नेतृत्व ने नीतिगत फ़ैसला लेते हुए खुद ही फ़ार्म छपवा कर व भर कर श्रम विभाग को दे दिये। अक्सर मालिकान अपनी नाजायज तालाबंदी को जायज बनाने के लिये इस तरह का हथकंडा अपनाते हैं। फ़ार्म पर दस्तखत करने से मज़दूर घबराते हैं और तालाबंदी को वैधता मिल जाती है। यही सोच कर कम्पनी ने फ़ार्म छपवाने का खर्च भी बचाना चाहा था। परन्तु इस बार मालिकान गच्चा खा गये जब मज़दूरों ने खुद से फ़ार्म छपवा कर व भर कर दे दिये। परिणाम स्वरूप करीब तीन माह तक चली तालाबंदी अवैध घोषित हुई और कम्पनी को इस अवधि का पूरा वेतन देना पड़ा। यह अपने आप में एक मिसाल थी, न इससे पहले न इसके बाद किसी ने ताला बंदी का वेतन लिया-दिया।

इसी दौर में कम्पनी के भीतर स्थित एक खौलते पानी के हौद में गिर कर एक मज़दूर की मौत हो गयी। मज़दूर नया-नया हेल्पर लगा था, ईएसआई का कवरेज तक उसका हुआ नहीं था। हौद में गिरा इस लिये था कि सुरक्षा के लिये आवश्यक बाड़ाबंदी तो की नहीं गयी थी, उल्टे वहां फ़िसलन ऐसी थी कि वह फ़िसल कर गिर गया और आलू की तरह उबल गया। कम्पनी ने तुर्त-फुर्त लाश को उसके गांव भेजने का प्रबन्ध करके मामले को दबाना चाहा था, दबा भी लेती यदि पहले वाली जेबी यूनियन होती तो। परन्तु अब यहां एक सशक्त यूनियन खड़ी हो चुकी थी, लिहाजा शव को गेट के बाहर रख कर मज़दूरों ने काम बंद कर दिया। पुलिस आई केस दर्ज हुआ। मृतक के परिजनों को बुलाया गया और उस वक्त के हिसाब से अच्छा-खासा मुआवजा उसके परिजनों को दिलवा कर मामला निपटाया गया।

इन सब घटनाओं के दौरान इन्हीं मालिकान की सेक्टर 6 स्थित आटोग्लाइड नामक फैक्ट्री के 100 से अधिक मज़दूरों ने एचएमएस कार्यालय में आकर बताया कि उन्हें दो-दो महीने तक वेतन नहीं दिया जा रहा है। वहां यूनियन बनी झंडा लगा। मालिकान ने वेतन देने की बजाय तालाबंदी कर दी। मज़दूरों ने हिसाब मांगा तो वह भी देने से साफ़ इन्कार कर दिया, घोषित कर दिया कि उसके पास देने को कुछ है ही नहीं। मज़दूरों के लिये यह बड़ी मुश्किल घड़ी थी, आखिर कब तक गेट पर बैठ कर भूखों मरते, अपने घरोंदों के किराये भरते? लिहाज़ा एक दिन मज़दूरों ने निर्णय लिया कि जिनके लिये संभव हो वे अपने बाल-बच्चों को लेकर कम्पनी के भीतर ही रहने लगें और कम्पनी से कोई माल बाहर न जा पायें। दरअसल मालिकान की मंशा थी कि कम्पनी के भीतर पड़े माल व खाली बिल्डिंग को बेच कर चलता बने। लेकिन जब मज़दूरों के आठ-दस परिवार अपनी गाय-भैंस तक लाकर कम्पनी के भीतर काबिज हो गये तो मालिकान के लिये मुश्किल घड़ी आ गयी। कुछ अच्छे पुलिस अधिकारियों के चलते पुलिस ने भी यह कहते हुए हस्तक्षेप करने से इन्कार कर दिया कि मज़दूरों का हिसाब करो।

आखिर मज़बूर होकर मालिकान को तमाम मज़दूरों का हिसाब बनाना पड़ा। तय यह हुआ कि कम्पनी के भीतर से जो माल आयेगा वह यूनियन की निगरानी में बिकेगा और वह पैसा मज़दूरों को दिया जायेगा। इस तरह ट्रक दर ट्रक निकलते गये और मज़दूरों का हिसाब होता गया। लेकिन मालिकान इसे अपनी शर्मनाक हार मान कर सदैव मौके की तलाश में रहते थे। इस बीच यहां एसपी स्वर्णजीत सिंह की जगह चौटालों का 'शेर' शमशेर सिंह एसपी तैनात हो गया। मालिकान की सांठ-गांठ सफ़ल हुई और एक शाम को जब वहां मौजूद अधिकांश मज़दूर चले गये और मैं भी निकल ही रहा था कि पुलिस की शह पर मालिकान के गुंडों ने लाठी-डंडों से जबरदस्त हमला कर दिया। बचे-खुचे चंद मज़दूरों के साथ-साथ मेरी भी अच्छी-खासी पिटाई हो गयी थी। इसके बाद मालिकान ने फ़ैक्ट्री का कब्ज़ा ले लिया और बचे रह गये आठ-दस मज़दूरों का हिसाब भी पी गये। बाद में पता चला कि मालिकान ने यह हमला करने से पूर्व मुख्य ऑटो पिन यूनियन के कुछ नेताओं को भरोसे में ले लिया था, वरना इस हमले की प्रतिक्रिया वहां बड़ी गंभीर हो सकती थी। कुछ ही दिन बाद मालिकान ने हमसे गद्दारी करने वाले नेताओं को भी बाहर का रास्ता दिखा दिया। बेशर्म इतने थे कि माफ़ी मांगते हुए वे फ़िर से एचएमएस दफ़्तर आये और बोले कि वे सरदार के बहकावे में आ गये थे। परन्तु तब तक सब कुछ विखर चुका था।

(सम्पादक : मजदूर मोर्चा)